(देश देशान्तरों में प्रचारित, सबसे सस्ता, उच्च कोटि का आध्यात्मक-पत्र

सन्देश नहीं मैं स्वर्ग लोक का लाई।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आई ॥

वार्षिक मूल्य २) सम्पादक—श्रीराम शर्मा। एक अंक ≡)

वर्ष ५ | मथुरा, १ नोम्बर सन् १९४४ ई० | अंक ११

नीच विचार रखना-एक खतरा है।

नीचता पूर्ण ओछे विचार रखना, बेईमानी धोखेबाजी, खुदगर्जी, की नीति का अवलम्बन करना लौकिक और पारलौकिक दोनों ही दृष्टियों से एक बहुत ही हानिकारक दुखदायी कार्य है। इस मार्ग पर चलने वाले को पग पग पर घृणा, बदनामी, तिरष्कार, अपमान उपहास और अविश्वास का सामना करना पड़ता है। उसको सच्चे मित्र और सच्चे सहयोगियों का मिलना प्रायः असंभव होजाता है। ऐसे व्यक्ति के लिये अपने जीवन में कोई महत्व पूर्ण उन्नति या सफलता प्राप्त करना कठिन है। उसे सदा कुढ़न, द्वेश, विरोध निन्दा, क्रोध, ईर्षा और अशान्ति में ही जलता रहना पड़ेगा। ओछी मनोवृति एक प्रकार की अग्नि है जो मस्तिष्क की सारी शान्ति और प्रसन्नता को जला कर खाक कर देती है, जो आदमी कमीने विचार और स्वभावों को अपने मन में स्थान देता है। उसका चित्त सदा मरघट की तरह सुलगता रहता है। किन्तु जिनने उच्च विचारों को अपना लिया है, जो कर्तव्य धर्म को प्रधानता देते हुए कार्य करते हैं वे दिन दिन आत्मिक और सांसारिक उन्नति के मार्ग पर बढ़ते जाते हैं। स्मरण रखिए नीच विचार रखना जीवन को नष्ट भ्रष्ट कर डालने वाला एक भयंकर खतरा है, जिससे हर किसी को सावधान रहने और बचने का प्रयत्न करना चाहिए।

अखण्ड-ज्योति !

सुधा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा॥

मथुरा १ नवम्बर सन् १९४४ ई०

तरो और तारो।

जीवन को आनन्द, प्रफुल्लता, संतोष और सरसता के साथ जीने के लिए सब कोई इच्छा करता है, परन्तु देखा जाता है कि इसमें सफलता बहुत कम को मिलती है। अधिकांश व्यक्ति कलह, दुर्व्यवहार अपमान उपेक्षा आक्रमण आदि सांसारिक आघातों से तथा अस्वस्थता, निर्धनता, अविद्या, असमर्थता आदि निजी आभावों से पीड़ित ...ा करते हैं। कहते हैं कि जिस वस्तु का जो इच्छा ...ता है उसे वह प्राप्त होकर रहती है, किन्तु हम ...ते हैं कि मनुष्य सुख की सबसे अधिक इच्छा ...ता है फिर भी वह उसे प्राप्त नहीं कर पाता। ... यह है कि बिना कारण के कार्य नहीं होता, ... साधन के सिद्धि नहीं मिलती। इच्छा के साथ ...चित सुविधा और साधनों का समन्वय हो तो ...ता मिलती है अन्यथा वह इच्छा शेखचिल्ली ...ल्पना की भांति निष्फल रहती है।

हर एक लक्ष तक पहुंचने के लिए कुछ नियम ...द्धान्त होते हैं। हर एक उद्देश्य को पूर्ण करने के ...छ नियम होते हैं, हर एक ध्येय को प्राप्त करने के कुछ मार्ग होते हैं। इन सिद्धान्त नियम और मार्गों के अवलम्बन द्वारा ही इष्ट की सिद्धि होती है अन्यथा अस्तव्यस्त प्रयत्न का कुछ फल नहीं होता। आशा तृष्णा के बन्धनों में बँधे हुए असंख्य मनुष्य कराहते रहते हैं। आकाश कुसुम पाने के लिए प्रतीक्षा करते करते उनकी आंखें पथरा जाती हैं, प्यास प्यास रटते गला सूख जाता है परन्तु जल की एक बूँद भी दृष्टि गोचर नहीं होती। अतृप्त आकांक्षाओं की चिता के साथ साथ मनुष्य स्वयं भी जल जाता है। आनन्द मय जीवन प्राप्त करने की आकांक्षा का भी यही हाल होता है। इच्छा यह होती है कि सुखी रहें किन्तु परिस्थितियां दारुण दुख के दल दल में घसीट ले जाती हैं। क्या इस अवाञ्छनीय स्थिति से छुटकारा नहीं पाया जा सकता? क्या आनन्द मय जीवन बिताने की आकांक्षा की पूर्ण नहीं किया जा सकती? किया जा सकता है, जरूर किया जा सकता है। आइए, हम लोग विचार करें कि आनन्द मय जीवन किन साधनों उपायों और सिद्धान्तों का अवलम्बन करने से मिलेगा।

सुख क्या है? शक्ति का प्रतिफल ही सुख है। दुख क्या है? अशक्ति की प्रतिक्रिया ही दुख है। आनन्द इष्ट है—शक्ति उसका साधन है। शिव शक्ति से संयुक्त है। प्रकृति—पुरुष, राधा कृष्ण, सीताराम, गौरी-शंकर, लक्ष्मी-नारायण, मायाजीव यह जोड़े बताते हैं कि रस अकेला नहीं है वरन् कला से बँधा हुआ है। प्राण का प्राकट्य देही के द्वारा होता है, बिना देह का प्राण अदृश्य है उसकी सत्ता अनुभव में नहीं आती। माया से रहित ब्रह्म, अलख अगोचर होगा। भगवान का अनुभव हमें तभी हो सकता है तब वह साकार हो, माया मिश्रित हो। उपनिषदों ने स्पष्ट कर दिया है कि "नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः।" निर्बलों को आत्म लाभ—आनन्द लाभ—नहीं हो सकता श्रुति कहती है 'बलमुपास्व' हे सुख की इच्छा करने वालो! बल को उपासना करो! निर्बलों को सुख प्राप्त होना तो दूर उनको तो किसी प्रकार जीवन धारण किये

रहना भी कठिन है। बलवानों के अतिरिक्त और कोई इस दुनियां में सुखी नहीं रह सकता है।

बल केवल शारीरिक बल को ही नहीं कहते। वह एक महा तत्व है जो जीवन के विभिन्न पहलुओं में विभिन्न प्रकार से दृष्टि गोचर होता है। बल सात भागों में बँटा हुआ है, सातों प्रकार के बल का समन्वय होने से एक पूर्ण बल बनता है। जैसे दश इन्द्रियों के समूह को शरीर कहते हैं वैसे ही सप्त शक्तियों का समूह बल है। जैसे कुछ इन्द्रियां हों कुछ न हों तो उसे अंग भंग कहा जाता है इसी प्रकार सात बलों में जिसका जितना अभाव होगा उतना ही एक पूर्ण बल में त्रुटि रहेगी। सात बल यह हैं—(१) कला—शऊर, सभ्यता सफाई सजावट, उठने बैठने बोलने चालने का ढंग, लोक व्यवहार, शिष्टाचार, (२) स्वास्थ्य—निरोगता, स्फूर्ति, उत्साह, इन्द्रियों की सक्रियता, सहन शक्ति, परिश्रमशीलता, शुद्ध रक्त की उचित मात्रा (३) ज्ञान—पढ़ना-लिखना, जीवनोपयोगी शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक राजनैतिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय, विषयों की अच्छी जानकारी तर्क, विवेचना, आदि की योग्यता। (४) धन—अपनी तथा अपने आश्रितजनों की जीवन यात्रा की आवश्यक वस्तुओं के जुटाने योग्य कमाई का साधन—रोजगार होना। (५) प्रतिष्ठा—घर तथा बाहर स्नेह, आदर, सम्मान, विश्वास तथा श्रद्धा होना (६) सन्मित्र—गहरे, विश्वासी तथा सच्चे सहयोगी मित्रों की वास्तविक घनिष्टता (७) मनोबल—साहस, वीरता, उदारता, त्याग, दया, सेवा, स्वाभिमान, कर्तव्य परायणता।

यह सात बल ऐसे हैं जो मनुष्य को सच्चा मनुष्य, जीवन को सच्चा जीवन बनाते हैं। इनके अभाव में न मनुष्य, मनुष्य है और न जीवन जीवन। अशक्त व्यक्ति एक प्रकार का कीड़ा है जो धरती माता का भार बढ़ाता है। दुख रूपी भवसागर में से अपनी जीवन नौका को वही पार लेजा सकता है जिसकी भुजाओं में पतवार चलाने लायक बल है। दुख की, पाप की चिन्ता की, वैतरिणी को तरने के लिए शक्ति रूपी गौ की पूँछ पकड़ने की आवश्यकता है। आनन्द; बल रूपी देवता का वरदान है। विजय श्री, उसके गले में विजय माल पहनाती है जो बलवान है, तेजस्वी है, प्रतापी है, पुरुषार्थी है। जो ऐसे नहीं हैं वे प्रकृति के अत्यन्त कठोर नियम 'श्रेष्ठतम की रक्षा" के सिद्धान्तानुसार पिस जाते हैं। दुर्बल का दैव भी घातक है।

अखण्ड ज्योति के पाठको! आनन्द मय स्वर्गीय जीवन बनाने का प्रयत्न करो। इसका एक मात्र उपाय यह है कि—शक्ति का सम्पादन करो, बलवान बनो, तभी दुखों की वैतरिणी को तर सकोगे। लेकिन स्मरण रखो यह तरना एकाङ्गी नहीं होना चाहिए। आप समाज के अंग है, समाज की उन्नति में आपकी उन्नति है। अकेले आप बलवान होगये और पड़ौसी लोग निर्बल बने रहे तो आप सच्चा आनन्द प्राप्त न कर सकेंगे। भुखमरी से पीड़ित एक एक दाने से बिलबिलाते हुए लोगों के बीच में बैठकर आप अकेले मधुर मिष्टान्न खावें तो हर ग्रास के साथ उन क्षुधा पीड़ितों की ईर्षा और नाराजी आपके गले से नीचे उतरेगी और वह पेट में जाकर लाभ के स्थान पर हानिकारक सिद्ध होगी। सुस्वादु भोजन का मजा तब है तब समान मित्रों के बीच में बैठ कर साथ साथ खाया जाय। हैजा, प्लेग मलेरिया, तपेदिक और उपदंश के रोगियों के बीच रहकर स्वस्थ पुरुष का भी स्वस्थ रहना कठिन है, इसी प्रकार निर्बल, पतित और दुखी लोगों के बीच बलवान व्यक्ति का बल भी उसे संतोष और शान्ति प्रदान नहीं कर सकता।

इस लिए हे आनन्द के इच्छुको! "तरो और तारो।" खुद भी बलवान बनो और दूसरों को बलवान बनाओ। जिओ और जिलाओ—उठो और उठाओ—हंसो और हंसाओ। "सेवा और शक्ति" आपके जीवन के दो उद्देश्य होने चाहिए दो

कार्यक्रम होने चाहिए। योग' दो वस्तुओं के जोड़ को कहते हैं। हे योग साधको! बल और सेवा को जोड़ो, स्वार्थ और परमार्थ को जोड़ो, सुख और संतोष को जोड़ो तभी तुम्हारी योग साधना सफल सफल होगी। शरीर का सुख चाहिए, आत्मा को सन्तोष चाहिए। शरीर के लिए बल की जरूरत है आत्मा को सेवा की जरूरत है। शरीर को आकांक्षा स्वार्थ की रहती है आत्मा को परमार्थ की। इन दोनों का योग करो जोड़ो, मिलाओ एकत्रित करो, तभी जीवनोद्देश्य प्राप्त होगा तभी सच्चे सुख की उपलब्धि होगी। गाड़ी में दो पहिये होते हैं शरीर की गाड़ी दो पैरों से चलती है ताली दो हाथों से बजती है. स्त्री और पुरुष मिलकर एक पूर्ण मनुष्य बनता है, दिन और रात्रि के सम्मिश्रण से एक बार होता है जीवन का आनन्द रथ भी दो पहियों वाला है दो घोड़ों वाला है—एक है "बल" दूसरा 'सेवा'। बल इकट्ठा करो और उसे सेवा में लगाओ। नेगेटिव और पोजेटिव तारों को मिलाते ही बिजली की शक्ति शाली धारा बहने लगती है। शक्ति संचय और जन-सेवा इन दोनों तार मिलते ही जीवन में आनन्द की अमृत वर्षा होने लगती है। प्रसन्नता, प्रफुल्लता और सरसता से अन्तःकरण को स्वर्गीय तृप्ति अनुभव होने लगती है।

अपने को ईश्वर की 'तरण तारिणी सेना' का सैनिक समझो। परमात्मा के आपके लिए दो आदेश हैं। " तरो और तारो" इन आदेशों को पालन करना—मानो ईश्वर की सच्ची भक्ति करना है। ऐसी भक्ति से ही प्रभु प्रसन्न होते हैं और ऐसे ही भक्तों के योग क्षेम का भगवान अपने कंधे पर उठाते हैं।

अपने घर के समान यदि कोई दूसरा घर हो सकता है तो वह मित्र का घर है।

× × ×

भजन के साथ कर्तव्य पालन भी।

कुछ लोग ऐसा समझ बैठे हैं कि रामधुनि लगाने या नाम कीर्तन करने मात्र से हम तर जायेंगे। भगवान हमारे नृत्य गान तथा वाद्य से मोहित होकर स्वर्ग का दरवाजा हमारे लिए खोल देंगे। यह विचार आलसी और निकम्मे लोगों की कल्पना मात्र है। किसी आर्ष ग्रन्थ में इस कल्पना का समर्थन नहीं किया गया है। हिन्दू धर्म पुरुषार्थ और कर्म प्रधान धर्म है। इसके धर्म ग्रन्थों में पुरुषार्थ और सत्कर्म का ही सर्वत्र विधान है और श्रेष्ठ आचरणों से ही परमात्मा का प्रसन्न होना तथा स्वर्ग मुक्ति का प्राप्त होना बताया गया है।

शास्त्र का मत है कि—

अपहाय निजं कर्म कृष्ण कृष्णेति वादिनः।
ते हरेर्द्वेषिणः पापाः धर्मार्थं जन्म यद्धरेः॥

अर्थात्—जो अपने धर्म को छोड़ कर केवल कृष्ण कृष्ण कहते रहते हैं वे भगवान के शत्रु हैं। भगवान तो धर्म की स्थापना के लिए अवतार लेते हैं। धर्म आचरण ही उनको प्रिय है। इसी परम प्रिय कार्य के लिए वे स्वयं जन्म धरते हैं और इसी कार्य को करने वालों से वे प्रसन्न होते हैं। केवल मात्र कृष्ण कृष्ण कहते रहने और आचरणों को गन्दा रखने से भगवान कदापि प्रसन्न नहीं होते वरन् उलटे अप्रसन्न होते हैं क्यों कि कानून का जानने वाला, सरकारी कामों को करने वाला मनुष्य ही जब कानून तोड़ता है तो अज्ञानी या दूर रहने वाले मनुष्य की अपेक्षा उसका अपराध अधिक माना जाता है और अपेक्षा कृत अधिक कड़ी सजा मिलती है।

भक्तों को चाहिए कि भगवान के नाम जप के साथ साथ अपने कर्तव्य धर्म को पूरी सावधानी के साथ पालन करें तभी उन्हें इच्छित लाभ प्राप्त हो सकेगा।

वर्तमान से मूल्यवान कोई समय नहीं।

(डाक्टर रामचरण महेन्द्र एम० ए० डी० लिट्०)
एफ० बी० टी० (लंदन)

कतिपय सज्जन कहा करते कि क्या बताएँ समय ही ऐसा खराब है कि हम कोई शुभ कार्य प्रारम्भ नहीं कर सकते। जब उपयुक्त काल आयेगा हम आध्यात्मिक उन्नति का कार्य करेंगे। ऐसे व्यक्ति आयुपर्य्यन्त कुछ नहीं कर पाते। प्रबल इच्छा की न्यूनता के कारण उनकी शक्तिएँ उत्कृष्ट मार्ग पर अग्रसर नहीं होतीं।

यदि तुम वास्तव में कोई उत्तम कार्य करना चाहते हो तो समय का रोना न रोते रहो। समय, तुम्हारी परिस्थिति, दुनियां की उलझनें तो यों ही चलती रहेंगी और तुम सोते सोते ही पूर्ण आयु समाप्त कर डालोगे। समय अति अल्प है और तुम्हें कार्य अत्याधिक करना है। वायुवेग से तुम्हारा अमूल्य जीवन कम हो रहा है। अपव्याय करने का समय नहीं है।

मुक्ति से बढ़कर संसार का अन्य कोई अभीष्ट नहीं तथा उसकी प्राप्ति के निमित्त वर्तमान काल से उत्तम अन्य कोई समय नहीं। जो समय व्यतीत हो गया सो सदैव के लिए हाथ से निकल गया। भविष्य के विषय में किसे ज्ञात है। जो कुछ करना है, आज ही कर लेना चाहिए। आगे का परिस्थिति की कौन जाने। आज हमें जो सुविधाएँ हैं किसे मालूम कल वे रहें, न रहें।

उत्तम कार्य के लिए प्रत्येक अवसर ही सुअवसर है। कार्य की उत्कृष्टता प्रत्येक अवसर को सुअवसर में परिणत कर देने की क्षमता रखती है। हमें उत्तम अवसरों की प्रतीक्षा में बैठे बैठे व्यर्थ समय न। नष्ट करना चाहिए प्रत्युत साधारण काल को ही उत्तम अवसर में परिणत कर लेना चाहिए। समय पर चूक जाने से आयु पर्य्यन्त पछताना पड़ता है।

प्रियवर, जागृत हो जाइये। आपने अपना बहुत सा समय नष्ट कर दिया। अब अल्प काल को लेकर साधन में आरूढ़ हो जाइये। जीवन तो अनित्य क्षणभङ्गुर है। किस क्षण परवाना आजाय. कौन कह सकता है? ग़ाफ़िल पड़े रहने से जो समय की पूँजी तुम्हारे पास अवशेष है वह भी व्यर्थ बरबाद हो जायगी। एक एक क्षण बहुमूल्य है। उफ्! यह बेशक़ीमती दिन किस वायु वेग से उड़े जा रहे हैं। देखते देखते मिनट, घंटे, दिन, वर्ष समाप्त हुए जा रहे हैं।

सुबह होती है, शाम होती है।
यों ही उम्र तमाम होती है॥

सुनो महात्मा कबीर पुकार पुकार कर चेतावनी दे रहे हैं। यथार्थ समय आ उपस्थित हुआ है। देखो! इसे नष्ट न करो—

कहता हूँ कह जात हूं, कहा बजाऊँ ढोल।
स्वास। खाली जात है तीन लोक का मोल॥ कबीर

विचार कीजिए व्यर्थ की हाहा हूहू में नष्ट कर देने के लिए आपके पास कौनसा वक्त शेष रहा है। दिन रात आलस्य, मोह, ताशबाजी में खराब कर देने के लिये अब कौन से क्षण पड़े हैं। इधर उधर की ठठोली, दूसरों की खराबियां निकालने या मजेदारियें करने के लिए अब कहाँ टाइम है?

"आज तो नहीं कर सके, कल से अमुक काम प्रारंभ करेंगे।" इस प्रकार "कल" पर टालने वाले व्यक्ति मरते समय अत्यन्त पश्चाताप करते हैं और कुछ नहीं कर पाते। व्यर्थ गंवाये हुए समय के पश्चाताप में ही वे उनके प्राण पखेरु उड़ जाते हैं।

आपके आठ घंटे सोने में व्यतीत हो जाते हैं। फिर दो तीन घंटे दोनों समय स्नान, शौचादि से निवृत्ति में निकल जाते हैं। कुछ मित्रों से गपशप में

निकल जाते हैं। कठिनाई से आप अपने औफ़िस का काम कर पाते हैं। वहां से हड़बड़ाते हुए गृह वापिस लौटते हैं। फिर चाय पान सुस्ताने में कुछ समय निकल जाता है। आप कहते हैं "आध्यात्मिक उन्नति के लिए अवकाश प्राप्त नहीं होता फिर देखा जायगा।"

प्रियवर, व्यर्थ के तर्क देकर वास्तविक सत्य पर पर्दा न डालो। तुम स्वयं ही अपने मित्र हो और स्वयं ही अपने शत्रु। यदि विवेक पूर्ण दृष्टि से चलो तो यथेष्ट समय निकाल सकते हो। सूर्य के चढ़ आने पर उठने के स्थान पर जल्दी उठो। अधिक वार्तालाप, गपशप, चहल कदमी आलस्य, परछिद्रान्वेषण इत्यादि से समय निकालो। समय की पाबंदी सुशीलता का चिन्ह है।

तुम अपने दिन भर के कार्य-क्रम की आलोचना करो। क्या खान-पान, वस्त्राभूषण पदार्थ संग्रह, शृङ्गार इत्यादि शरीर के क्षुद्र विषयों में तुम अपना बहुमूल्य समय व्यतीत करते हो? अपने अन्तःकरण का अन्तःदर्शन करो। क्या ऊँचा उठने और इन क्षुद्रताओं से वैराग्य प्राप्त करने की उत्कृष्ट भावना तुम्हारे मनोमन्दिर में प्रविष्ट होकर तूफ़ान नहीं मचाती? तुम्हारे मित्र तेज़ी से उन्नति के पथ पर अग्रसर होते चले जा रहे हैं और तुम अडियल अश्व की भाँति जहां के तहां निष्क्रिय पड़े सड़ रहे हो? एकान्त में बैठकर अपनी आत्मा को टटोलो। वहीं से तुम्हें आन्दोलन को प्रेरणा प्राप्त होगी।

हे व्यथित आत्मा! इतना समय व्यर्थ करने पर अब जो समय शेष है उसे कृपण की भांति कार्य में व्यतीत कर। प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व जाग्रत होकर अपने हृदयस्थ आत्मा द्वारा निर्देशित मार्ग पर नियमितरूप से आरूढ़ हो। तेरे अणु अणु में पवित्रता हो। तेरे रोम रोम में शान्ति का निवास हो। तेरे हृदय में परमपिता का साक्षात्कार हो। आन्तिरिक प्रदेश में दृढ़ संकल्प हो और तू प्रत्येक क्षण अखण्ड आनन्द का अनुभव करते हुए अग्रसर हो तो वास्तविक जीवन का रसास्वादन कर सकता है।

एक एक पैसा एकत्रित करने से निर्धन धनवान् बनता है; एक एक क्षण का विचार रखने वाला सिद्धि प्राप्त कर लेता है। आत्मसाक्षात्कार के अनुभव समय का हिसाब किताब ठीक रखने वाला ही प्राप्त कर सकता है। व्यर्थ नष्ट होते हुए क्षणों को उद्योग में व्यय करने वाला साधक प्रतिमा प्राप्त करता है। हमें उत्तम अवसरों की प्रतीक्षा में न बैठे रहना चाहिए। शुभ कार्य के निमित्त प्रत्येक समय ही सुअवसर है। शुभ भावना साधारण समय को उत्तम अवसर में परिणत करने की क्षमता रखती है। तुम मोह निद्रा से जागृत हो कार्य में प्रवृत्त हो जाओ।

जेफीयर पान्ट मारगन की उक्ति है कि "मुझे एक घंटा एक सहस्र रुपये के अनुरूप प्रतीत होता है।" अहह! इस दिशा में हम कितने अमीर हैं समय की कितनी सम्पत्ति हमारे पास पड़ी है। काश, हम उसका सद्प्रयोग सीख सकते? इस महापुरुष के कथनानुसार अत्यन्त अल्प मात्र में मनुष्य समय का वास्तविक मूल्य अँकित होंगे। समय के प्रताप से अनभिज्ञ व्यक्ति ही क्लान्त एवं निर्धन दृष्टिगोचर होते हैं। कदाचित् सुखी एवं दुःखी व्यक्ति में यही अन्तर है कि एक तो समय का सदुपयोग करता है किन्तु द्वितीय उसे व्यर्थ बरबाद कर देता है।

तुम कौन सी श्रेणी में हो? सोचो और उत्तर दो। यदि तुम समय व्यर्थ करते हो और व्यर्थ की दलीलें पेश करते हो तो संसार में कौन तुम्हें सद्-मार्ग प्रदर्शन कर सकता है। तुम्हारे मन में इधर उधर भ्रमण करने की आदत बन गई है एकाग्र नहीं होता। तुम्हारी निष्फलता का मूल कारण एक से अधिक कामों में लग कर व्यर्थ समय बरबाद करना हो सकता है किन्तु इस दशा में स्वयं तुम्हीं मनः निग्रह कर सकते हो। तुम्हीं भ्रमित मन को

मध्य बिन्दु में सलग्न कर सकते हो। एक कार्य
ते समय अन्य प्रकार के विचार तुम्हें अस्त
स्त न करें इसकी कुंजी तुम स्वयं हो । स्मरण
ो, अधिकांश पुरुष एकाग्रता के अभाव से
नसिक शक्तियों को बिखरी रख कर अधिक समय
र्थ खो दिया करते हैं। एकाग्रता में महान् शक्ति
न्तर्निहित है । उसी के द्वारा तुम समय बचा
क्ते हो।

तुम जिस वस्तु की आकांक्षा करते हो उसी को
कर आत्मा में प्रविष्ट हो जाओ। उसी पर चित्त
केन्द्रित करो। उसी के अनुसार सोचो, विचारो,
कल्प सृष्टि करो। ज्यों ज्यों तुम समग्र शक्तियों
संतुलित प्रकाश इस उद्देश्य पर गिराओगे—
मय तो बचेगा ही, साथ ही तुम्हारा इच्छित
ार्थ स्वयं आकर्षित होकर तुम्हारे समीप आवेगा।
क बलवान् मनुष्य की दृढ़ इच्छा शक्ति प्रकृति
समान अस्तित्त्व में सजीव तत्त्व है । मनुष्य
च्छा से बना हुआ है। इच्छा के अनुरूप रुचि, रुचि
अनुरूप कार्य और कार्य के अनुरूप फल प्राप्त
ता आया है।

———

किसी के धन का लोभ न करना । जिस घड़ी
तुम इस उपदेश को आचरण में लाते हो, उसी
ड़ी से तुम जगत के ज्ञानवान नागरिक बन जाते
। और प्राणी मात्र के साथ मैत्री कर लेते हो।
। मनुष्य ईश्वर और उसके अद्वितीय अविचल
म्राट—पद को नहीं मानता, उसकी आकांक्षा
भी तृप्त हो ही नहीं सकती।

× × ×

लोभ और दंभ ईश्वर द्वारा शापित हैं ही,
भी के लिए दुर्गुण हैं; पर धर्माचार्य के तो वे
कृष्ट गुण हैं।

× × ×

छोटे कार्यों में महानता का प्रदर्शन।

यूनान देश के थ्रेस प्रान्त के अब्डेरा नगर में एक अनाथ बालक बड़ी तत्परता पूर्वक विद्याध्ययन करता था। वह नित्य जंगल से लकड़ियां काटकर लाता और बाजार में बेचकर अपना पेट भरता था।

एक दिन एक भला आदमी उधर से निकला उसने देखा कि लकड़ियों का गट्ठा बड़ी सुन्दरता और कला पूर्ण ढंग से बंधा हुआ । भला आदमी उसे देखने के लिए ठहर गया और लड़के के शऊर की परीक्षा लेने के लिए उससे कहा—इस गटठे को खोल कर तुम फिर से बांधो मैं देखना चाहता हूँ। लड़के ने अपना गट्ठा खोलकर लकड़ियां बखेर दीं और फिर उन्हें उसी तरह चुन कर कला पूर्ण ढंग से बाँधा। भले आदमी पर इसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। क्योंकि लड़के के अन्दर "छोटे काम को भी पूरी दिलचस्पी और कलापूर्ण ढंग से करने" के संस्कार थे । ऐसा शऊर और संस्कारों वाले मनुष्य ही संसार में महापुरुष हुआ करते हैं।

भले आदमी ने उस लड़के को अपने साथ ले लिया और उसकी सारी शिक्षा दीक्षा का प्रबंध स्वयं किया। यह लड़का बड़ा होने पर यूनान का महान दार्शनिक पैथोगोरस कहलाया और वह भला आदमी जिसने एक ही दृष्टि में बालक के अन्दर छिपे हुए देवत्व को पहचान लिया था वह था यूनान का विश्व विख्यात तत्वज्ञानी—डेमोक्रीटस।

डेमोक्रीटस जिस गुण पर मुग्ध हुआ था वह गुण देखने में साधारण था पर वास्तव में महानता का बीज उसी के अन्दर छिपा हुआ है जो मनुष्य अपने काम को पूरी दिलचस्पी से कलापूर्ण ढंग से इस प्रकार करता है। उसी व्यक्ति के कार्य आदर्श और प्रशंसनीय होते हैं। जो छोटे से छोटे काम में अपनी महानता की छाप लगाता है दुनियां उसीको महत्व प्रदान करती है। ———

दुखों का कारण पाप ही नहीं है

आमतौर से दुख को नापसंद किया जाता है। लोग समझते हैं कि पाप के फलस्वरूप अथवा ईश्वरीय कोप के कारण दुख आते हैं परन्तु यह बात पूर्ण रूप से सत्य नहीं है। दुखों का एक कारण पाप भी है यह तो ठीक है परन्तु यह ठीक नहीं कि समस्त दुख पापों के कारण ही आते हैं।

बहुत बार ऐसा भी होता है कि ईश्वर की कृपा के कारण, पूर्व संचित पुण्यों के कारण और पुण्य संचय की तपश्चर्या के कारण भी दुख आते हैं। भगवान को किसी प्राणी पर दया करके उसे अपनी शरण में लेना होता है, कल्याण के पथ की ओर ले जाना होता है तो उसे भव बन्धन से कुप्रवृत्तियों से छुड़ाने के लिए ऐसे दुख दायक अवसर उत्पन्न करते हैं जिनकी ठोकर खाकर मनुष्य अपनी भूल को समझ जाय, निद्रा छोड़कर सावधान होजाय।

सांसारिक मोह ममता और विषय वासना का चस्का ऐसा लुभावना होता है कि उन्हें साधारण इच्छा होने से छोड़ा नहीं जासकता। एक हलका सा विचार आता है कि जीवन जैसी बहुमूल्य वस्तु का उपयोग किसी श्रेष्ठ काम में करना चाहिए परन्तु दूसरे ही लक्ष ऐसी लुभावनी परिस्थितियाँ सामने आजाती हैं जिनके कारण वह हलका विचार उड़ जाता है और मनुष्य जहाँ का तहाँ पड़ा रहता है। उसी तुच्छ परिस्थिति में पड़ा रहता है। इस प्रकार की कीचड़ में से निकालने के लिए भगवान अपने भक्त में झटका मारते हैं. सोते हुए को जगाने के लिए उसे बड़े जोर से झकझोरते हैं। यह झटका और झकझोरा हमें दुख जैसा प्रतीत होता है।

मृत्यु के समीप तक ले जाने वाली बीमारी, परम प्रिय स्वजन की मृत्यु, असाधारण घाटा, दुर्घटना, विश्वासनीय मित्रों द्वारा अपमान या विश्वास घात जैसी दिलको चोट पहुँचाने वाली घटनाऐं इसलिए आती हैं कि उनके जबरदस्त झटके के आघात से मनुष्य तिलमिला जाय और सजग होकर अपनी भूल सुधार ले। गलत रास्ते को छोड़कर सही मार्ग पर आजाय।

पूर्व संचित शुभ संस्कारों के कारण इसलिए दुख आते हैं कि शुभ संस्कार एक सच्चे चौकीदार की भांति उस मनुष्य को उत्तम मार्ग पर ले जाना चाहते हैं परन्तु पाप की ओर जब उसकी प्रवृत्ति बढ़ती है तो वे शुभ संस्कार इसे अपने ऊपर आक्रमण समझते हैं और इससे बचाव करने के लिए पूरा प्रयत्न करते हैं। कोई आदमी पाप कर्म करने जाता है परन्तु रास्ते में ऐसा विघ्न उपस्थित होजाता है जिसके कारण उस कार्य में सफलता नहीं मिलती। वह पाप होते होते बच जाता है। चोरी करने के लिए जाते हुए यदि रास्ते में पैर टूट जाय और वह दुष्कर्म पूरा न हो सके तो समझना चाहिए कि यह पूर्व संचित शुभ संस्कारों के कारण पुण्य फल के कारण हुआ है।

धर्म कर्म करने में कर्तव्य धर्म का पालन करने में असाधारण कष्ट सहना पड़ता है, अभावों का सामना करना होता है। इसके अतिरिक्त दुष्टात्मा लोग अपने पाप पूर्ण स्वार्थों पर आघात होता देखकर उस धर्म सेवी के विरुद्ध होजाते हैं और नाना प्रकार की यातनाऐं देते हैं। इस प्रकार के कष्ट सत्पुरुषों को पग पग पर झेलने पड़ते हैं। यह पुण्य संचय के, तपश्चर्या के, अपनी सत्यता की परीक्षा देने के दुख हैं।

निस्संदेह कुछ दुख पापों के परिणाम स्वरूप भी होते हैं परन्तु यह भी निश्चित है कि भगवान की कृपा से पूर्व संचित शुभसंस्कारों से और धर्म सेवा की तपश्चर्या से भी आते हैं। इसी प्रकार जब अपने ऊपर कोई विपत्ति आवे तो भी यही न सोचना चाहिये कि हम पापी, अभागे या ईश्वर के कोप भोजन हैं। संभव है वह कष्ट हमारे किसी हित के लिए ही आया हो, उस कष्ट की तह में कोई ऐसा लाभ छिपा हुआ हो जिसे हमारा अल्पज्ञ मस्तिष्क आज ठीक ठीक रूप से न पहचान रहा हो।

———

प्राणायाम संबंधी अमेरिकन खोज।

प्राणायाम से स्वास्थ्य का कितना घन संबंध है इसका महत्व हम भारतवासी आज भूले हुए हैं! हमारे पूर्वजों ने शारीरिक और मानसिक उन्नति के लिए प्राणायाम को अत्यन्त ही महत्वपूर्ण बताया है। योरोपीय विद्वानों का ध्यान भी इस ओर आकर्षित हुआ है और वे लोग जितनी अधिक दिलचस्पी इस ओर ले रहे हैं उतनी ही नई नई बातें उन्हें मालूम होती जाती हैं।

पिछली लड़ाई में जब अमेरिका युद्ध में सम्मिलित हुआ तो सेना के लिए भर्ती की जाने लगी। लेकिन जो नौजवान फौज में भर्ती होने के लिए आते थे उनमें से ४० प्रतिशत डाक्टरी जांच में शारीरिक कमजोरी के कारण अस्वीकृत होने लगे। यह खबर जब अखबारों में छपी तो सारे अमेरिका में तहलका मच गया। सैनिकों की इतनी अधिक आवश्यकता और नौजवानों के स्वास्थ का यह हाल! बात वास्तव में चिन्ता करने की और घबराने की थी।

उस समय अमेरिका के एक आध्यात्मिक महानुभाव श्री. टामसन रावर्ट गैन्सन ने सरकार को लिखा कि यदि सेना में भर्ती के लिए डाक्टरी कारणों से अस्वीकृत नौजवानों को कुछ समय के लिए मुझे दे दिया जाय तो चन्द दिनों में ही मैं उनकी कमजोरी को दूर करके उन्हें सेना में भर्ती होने योग्य बना सकता हूं। सरकार के उच्च अधिकारियों ने श्री. गैन्सन से भेंट की और उन्हें कमजोर नौजवानों को बलवान बनाने के लिए काम करने की स्वीकृति दे दी।

श्री० टामसन रावर्ट गैन्सन ने ओहिमोस्टीट पर एक स्कूल खोला जिसमें प्राणायाम द्वारा स्वास्थ्य सुधारने की शिक्षा दी जाने लगी। वह शिक्षा ऐसी उपयोगी और जादू के समान चमत्कार पूर्ण साबित हुई कि एक ही मास में दिल, दिमाग, गुर्दे और जिगर में पहले की अपेक्षा बहुत कुछ सुधार होगया और जिन्हें एक महीने पहले अस्वीकृत कर दिया गया था वे डाक्टरी जांच द्वारा धड़ाधड़ स्वीकृत होने लगे। इतनी जल्दी, इतने आश्चर्य ढंग से इतना अधिक लाभ होते देखकर लोगों को दंग रह जाना पड़ा। तब अमेरिका की जनता ने जाना कि प्राणायाम साधारण सी क्रिया है तो भी इसके लाभ असाधारण हैं। तब से वहाँ की जनता प्राणायाम की सहायता से अपने स्वास्थ्य में बहुत भारी सुधार कर रही है। वहां अनेकों शिक्षालय ऐसे हैं जिनमें प्राणायाम क्रियाओं द्वारा नाना प्रकार के रोगों का इलाज किया जाता है और गिरी हुई तन्दुरुस्तियों को सुधारा जाता है।

रावर्ट जैन्सन इस बात पर बड़ा जोर देते हैं कि सांस लम्बी और गहरी लेनी चाहिए। क्योंकि पूरी सांस लेने से शरीर को उचित मात्रा में प्राणप्रद वायु (आक्सिजन) प्राप्त होती है जिसके प्रभाव मुर्दा और सुस्त अङ्गों में फिर से चैतन्यता आजाती है और या संचार ठीक ठीक रीति से होकर शरीर में सजीवता भर देता है। कलेजा, पेट, आमाशय, गुर्दे और मूत्राशय पर प्राणप्रद वायु की अधिकता का विशेष प्रभाव पड़ता है और उनके अन्दर जो खराबियां मुद्दतों से रुको पड़ी थीं वे थोड़े ही दिनों में अपने आप निकल जाती हैं। फेफड़े की मजबूती का गहरी स्वांस से अत्यधिक संबंध है। गहरी, पूरी और लम्बी सांस लेने का कुछ ही दिन अभ्यास किया जाय तो सीने की चौड़ाई और मजबूती में जरूर फर्क पड़ता है। प्राणायाम के अभ्यास से लोग सीने पर कई मन भारी पत्थरों को रख कर तुड़वा लेते हैं और छाती पर हाथी खड़ा कर लेते हैं।

वैज्ञानिक जगत में प्राणायाम के संबंध में अनेक प्रकार के अन्वेषण होरहे हैं। योरोप और

अपने बड़े भाई की जन्मगाँठ पर—तीन घंटे समय की भेंट दीजिए

(श्री० हरिजोत्र्यंबकजी भावे, मैसूर)

'अखण्ड ज्योति' अपने पाठकों को अपना कुटुम्बी मानती है। और उनकी वर्ष गांठ के अवसर पर अखण्ड ज्योति कार्यालय में एक आध्यात्मिक विधि से धार्मिक कृत्य किया जाता है एवं उनके दीर्घ जीवन तथा सब प्रकार की उन्नति के लिए ईश्वर से मंगल कामना की जाती है। इस अवसर आचार्य जी एक सन्देश भी उन सज्जन के लिए भेजते हैं। मैंने कई महानुभावों की वर्ष गांठ अखण्ड ज्योति कार्यालय में मनाई जाती देखी है और उस अवसर पर प्रकट किये गये आचार्य जी के उद्गारों को सुना है। उस समय ऐसा मालूम पड़ता है मानो आचार्य जी अपने सगे छोटे भाई की जयन्ती मना रहे हैं वह महानुभाव यहाँ नहीं होते तो भी ऐसा लगता है मानो वह यहां मौजूद ही हैं।

जन्म जयन्ती मनाना—परिवार के घने स्नेह का द्योतक है। आचार्य जी अपने इस स्नेह का परिचय कई वर्षों से दे रहे हैं। अपने परिवार के प्रति उनकी ममता असाधारण है। इसे देखते हुए मुझे लगता है कि परिवार की ओर से भी आचार्य जी के प्रति भी वैसा ही स्नेह प्रकट किया जाना चाहिए, पाठकों को भी अपने बड़े भाई की जयन्ती मनानी चाहिए। ता० ६ दिसम्बर को आचार्य जी के जीवन का ३२ वां वर्ष समाप्त होकर ३३ वां आरम्भ होगा। इस अवसर पर मेरा एक प्रस्ताव पाठकों के सामने है। वह यह कि—ता० ७—८ और ६ दिसम्बर को कम से कम एक एक घंटा अखंड ज्योति के नये ग्राहक बढ़ाने का प्रचार करने में लगाया जाय। हर एक पाठक अपने सम विचार वाले बन्धुओं से अखण्ड ज्योति की महत्ता बताते हुए ग्राहक बनने के अनुरोध करने के लिए मिलें और कम से कम एक नया ग्राहक बढ़ाने में सफलता प्राप्त करें। अखण्ड ज्योति का प्रचार, सद्विचारों का विस्तार यही सबसे अधिक अपनी प्रिय वस्तु आचार्य जी बताया करते हैं। इस भेंट से उन्हें बहुत संतोष होता है। आशा है कि पाठक गण आचार्य जी के प्रति अपना प्रेम प्रदर्शित करने और सद्विचारों के प्रचार का पुण्य लाभ करने के लिए ता० ७—८—६ दिसम्बर को कम से कम एक एक घण्टा समय अवश्य खर्च करेंगे। आपके यह तीन घंटे अखण्ड ज्योति के ज्ञान यज्ञ में असाधारण अमूल्य अमृतमयी सहायता करने वाले सिद्ध होंगे।

अमेरिका के डाक्टर अपनी चिकित्सा में प्राणायाम को महत्व पूर्ण स्थान देरहे हैं। कई स्थानों पर सुविज्ञ डाक्टरों ने केवल प्राणायाम द्वारा समस्त रोगों को अच्छा करने के चिकित्सालय स्थापित किये हैं। जिन बातों को डाक्टर लोग अब जानते जाते हैं उन बातों को हमारे पूर्वजों ने बहुत पहले जान लिया था और स्वास्थ्य के लिए प्राणायाम को आवश्यक बताया था। परन्तु हम लोग दवाइयों के भड़कीले विज्ञापनों के चकाचौंध में अपनी प्राचीन सम्पत्ति का निरादर करने में लगे हुए हैं। काश, हम लोगों ने प्राणायाम का महत्व समझा होता तो हम लोगों के स्वास्थ कैसे सुन्दर हुए होते।

प्रेम में अमृत है और विष भी। मनुष्य इसमें पागल हो जाता है, महा अन्ध हो जाता है और प्राण रहते भी मृत्यु की गोद में खेलने लगता है।

× × ×

गंगाजी का वैज्ञानिक महत्व

गंगा के जल में कुछ ऐसे रासायनिक पदार्थों का मिश्रण है जिससे उसके द्वारा समय समय पर आश्चर्य जनक परिणाम उपस्थित होते हैं। गंगा जल वर्षों तक रखा रहने पर भी खराब नहींहोता है। बल्कि खराब पदार्थ गंगा में पड़कर अपना बुरा प्रभाव खो बैठते हैं। हरद्वार के गंगातट पर खास कर ब्रह्मकुण्ड में लाखों मन हड्डियां डाली जाती हैं। इस कुंड में से उन हड्डियों के निकालने का कुछ प्रबंध नहीं है। किन्तु गंगा जल के प्रभाव से वहां हड्डियों का निशान भी नहीं बचता सब गलकर पानी होजाती हैं। इस पर भी वह गंगा जल डाक्टरी परीक्षा से शुद्ध ही साबित होता है। संक्रामक रोगों के रोगियों की हड्डियां अपने विष से गंगा जल को दूषित नहीं कर पातीं वरन् स्वयं ही निर्विष होजाती हैं।

वैद्यक ग्रन्थों का मत है कि अजीर्ण, पुराना बुखार, तपेदिक, पेचिश, दमा, धर्मरोग, मस्तक शूल आदि रोगों के लिए गंगा जल का सेवन बहुत ही लाभदायक है। स्वास्थ्य को सबल बनाने की और संक्रामक कीटाणुओं को नाश करने की शक्ति है। कुष्ट रोगियों को गंगा किनारे रखने का प्रयोजन यह है कि वहां की जल वायु से कुष्ट अच्छा हो जाय। इतना तो निश्चित है कि गंगा जल के व्यवहार से कोढ़ की बढ़ोतरी रुक जाती है। बर्फ का शुद्ध जल गंगा में आता है यह तो है इसके अतिरिक्त जिन पर्वतीय स्थानों में होती हुई वह बहती है उन भागों में लाभ दायक रसायनिक पदार्थों की खानें तथा जड़ी बूटियों के जंगल हैं यह सब चीजें गंगाजल में मिलकर उसमें जादू जैसे गुणों का समावेश कर देती हैं। चाँदी और सोने का कुछ भाग गंगा जल में पाया जाता है जो कि तन्दुरुस्ती बढ़ाने के लिए बहुत ही उपयोगी है। गंगा जल ऐसा शोधक और जन्तुनाशक है कि आज कल किनारे के शहरों की सारी गंदगी उसी में डाली जाती है तो भी उसकी शुद्धता में अन्तर नहीं आता। सैकड़ों नदी नाले रास्ते में मिलते जाते हैं तो भी गंगा में मिलकर वह सब पानी गंगा के समान ही गुणकारी होजाते हैं। डाक्टर नेलसन ने लिखा है कि कलकत्ता से चलने वाले जहाज हुगली नदी से गंगाजल लेकर चलते हैं और यह पानी लंदन तक खराब नहीं होता किन्तु लन्दन से जहाजों में जो टेम्स नदी का पानी भरा जाता है वह बम्बई पहुंचने से पहले ही खराब होजाता है।

फ्रान्स के डाक्टर डी० हेटेल ने अपने वैज्ञानिक प्रयोगों से सिद्ध करके दिखाया है कि गंगाजल में क्षयी, संग्रहणी और विशूचिका जैसे कठिन रोगों को अच्छा करने की शक्ति है तथा बिगड़े हुए घाव और फोड़े उससे अच्छे हो सकते हैं। इन डाक्टर महोदय ने गंगाजल के संमिश्रण से एक "बैक्टीरिया फाज" (Bectoriophage) नामक औषधि बनाई है जो ऐसे ही कठिन रोगों में प्रयोग की जाती है।

अमेरिका का एक यात्री मार्क टूवेने भारत आया था उनने लिखा है कि—जब हम आगरा पहुंचे तो एक आश्चर्य जनक वैज्ञानिक घोषणा सुनने का अवसर प्राप्त हुआ। वह घोषणा यह थी कि—संक्रामक बीमारियों के कीड़ों को नाश करने वाला सबसे प्रधान द्रव गंगाजल है यह घोषणा ध्रुव सत्य थी।

सरकारी वैज्ञानिक विभाग के कार्यकता मि० हेनकेन ने अनेक प्रकार के गंदे तथा संक्रामक रोगों से भरे हुए पानी को विभिन्न नदियों के पानी में डाल डाल कर अपना परीक्षण किया। उनने देखा कि गंगाजल में कुछ ही घंटे के अन्दर वे समस्त कीटाणु नष्ट होगये। किन्तु दूसरी नदियों के जल में वे कीटाणु असाधारण गति से बढ़ने लगे। सन् १९२४ में जर्मनी के प्रमुख वैज्ञानिक डाक्टर जे०

आलिवर भारत आये थे उन्होंने यहाँ की सभी नदियों के जलों की परीक्षा की। अपने परीक्षण की विस्तृत रिपोर्ट उन्होंने न्यूयार्क के इन्टर नेशनल मेडीकल गजट में छपाई थी। उन्होंने गंगा के बारे में लिखा था कि—गंगाजल संसार के सब जलों से स्वच्छ, पवित्र, कीटाणु नाशक तथा स्वास्थ्य कर है। योरोप के जल विशेषज्ञ डाक्टर ई० एफ० हेकियान भारत आये थे उन्होंने अपने परीक्षण का परिणाम बताते हुए लिखा है कि—गंगाजल अत्यंत स्वच्छ तथा पवित्र है। इसमें रक्त बढ़ाने की शक्ति है। रोगियों को इसके द्वारा एक विचित्र मानसिक शान्ति प्राप्त होती है यही कारण है कि भारत वासी किसी व्यक्ति के मरते समय उसके मुँह में गंगाजल डालते है ताकि मानसिक शान्ति के साथ रोगी की मृत्यु हो। कभी कभी तो ऐसी आश्चर्य जनक घटनाऐं देखी जाती है कि गंगाजल के प्रयोग से मृत व्यक्ति जीवित हो उठे (विजयनगर थर्ड डायनिस्टी १९३५) से पता चलता है कि विजय नगर के राजा कृष्ण राय जब वे मृत प्राय थे तो उनको गंगाजल दिया गया और उसके प्रभाव से वे अच्छे होगये।

गंगा जल की विशेषता और महानता के संबंध में दुनिया को अभी बहुत थोड़ी बातें मालूम हुई हैं परन्तु जैसे जैसे उसके गुण और लाभों का पता चलता जायगा. संसार भर को गंगाजी की महिमा उसी प्रकार स्वीकार करनी पड़ेगी जैसे कि आस्तिक हिन्दू लोग करते हैं।

उत्तम पुरुषों की संगति करनी चाहिये; क्योंकि अच्छी संगति में पड़कर बुरे लोग भी अच्छे हो जाते हैं। पान के बीड़ों के साथ महुए या पलास के पत्ते भी बड़े लोगों के हाथों में पहुँच जाते हैं।

× × ×

सत्संग की महिमा।

(श्री० विश्वेश्वर दयालुजी शर्मा, भरथना)

सत्संग की महत्ता प्रकट करते हुए रामायण कहती है कि—

चौ०—मज्जन फल देखिय तत्काला।
काक होहिं वक पिकहु मराला॥
शठ सुधरहिं सत संगति पाई।
पारस परसि कुधातु सुहाई॥
सो मोसन कहि जात न कैसे।
शाक बणिक मणि गुण गण जैसे॥
काम क्रोध मद लोभ नसावन।
विमल विवेक विराग बढ़ावन॥
सादर मज्जन पान किये ते।
मिटहि पाप परिताप हिये के॥
जिन यह बारि न मानस धोये।
ते कायर कलिकाल विगाये॥

दो०-विनु सत्संग न हरिकथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु राम पद होहि न दृढ़ अनुराग॥
तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिय तुला इक अंग।
तुलै न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत्संग॥

निस्संदेह सत्संग से अधिक महत्व पूर्ण और कोई वस्तु इस दुनियाँ में नहीं है। समय का सदुपयोग सत्संग से बढ़कर और कुछ नहीं है। उच्च विचारों वाले, विद्वान, सदाचारी, कर्तव्य परायण, लोक हितैषी और देश काल पात्र की स्थिति को समझने वाले महात्माओं की संगति में रहने में मनुष्य को सच्चा पथ प्रदर्शन प्राप्त होता है।

हमें अच्छी सङ्गति की तलाश में सदैव रहना चाहिए। सत्संग किस से किया जाय इसका निर्णय करते हुए किसी मनुष्य के व्यक्तित्व से प्रभावित होने की अपेक्षा यह देखना चाहिए कि इसके विचार सामयिक, उपयोगी और उचित हैं या नहीं। जब तक ऐसा मनुष्य न मिले तब तक महापुरुषों के ग्रन्थों से ही सत्संग करना चाहिए। ——

गायत्री की अद्भुत शक्ति ।

(श्री० मन्त्र योगी)

विगत अंक में "गायत्री अनुष्ठान की सिद्धि" शीर्षक लेख में हमने सवा लक्ष जप की विधि विस्तार पूर्वक बताई थी, इस विधि के साथ ठीक प्रकार यदि जप किया जाय तो उससे ऐसे चमत्कारी फल प्राप्त होते हैं जिन्हें देखकर अचम्भे से दंग रह जाना पड़ता है। कई प्रकार की ऐसी आपत्तियां जिनसे छुटकारा मिलना कठिन दिखाई देता है, गायत्री माता की कृपा से निवारण होते देखा गया है। बर्दवान के एक सम्पन्न महानुभाव सन् ३८ में एक बड़े पेचीदा अभियोग में फँसे हुए थे, ऐसा अनुमान था कि भारी राजदंड भुगते बिना छुटकारा न मिलेगा उन्होंने हमारे बताये अनुसार गायत्री का अनुष्ठान किया, तदुपरान्त मुकदमे का फैसला हुआ यह फैसला ऐसा संतोष जनक था कि वे महानुभाव स्वयं आश्चर्यान्वित हुए और उस दिन से गायत्री पर असाधारण श्रद्धा करने लगे।

नाडियाद (गुजरात) के एक सज्जन के घर में कई वर्षों से बीमारी का प्रकोप था, तीन मृत्युऐं एक साल के अन्दर हो चुकी थीं, आये दिन कोई न कोई चारपाई पर गिरा रहता था, उन्होंने गायत्री की शरण ली दस हजार गायत्री प्रति दिन के हिसाब से उन्होंने जप किये, तब से यह चौथा वर्ष चल रहा है उनके घर में कोई भी बीमार नहीं पड़ा। बारी साल (बंगाल) के एक प्रसिद्ध व्यापारी के घर में कई उनकी विधवा लड़की तथा पतोहू को भूतोन्माद था, भूतप्रेतों का बड़ा उपद्रव उनके घर में मचा रहता था, अनेक प्रकार के उपचारों में काफी परिश्रम किया जा चुका था किन्तु कोई उचित हल न निकलता था, हमने उन्हें गायत्री की उपासना करने की सलाह दी परिणाम बहुत अच्छा निकला। भूत बाधा के सारे उत्पात उनके घर से चल गये।

एक रानी साहिबा का भतीजा कुछ अर्ध विक्षिप्त सा हो चला था, बार बार घर छोड़ कर चला जाता था, महीनों अज्ञात बास में निकालकर घर वापिस आता था, सारा परिवार उसकी इस दशा के कारण चिन्ता ग्रस्त रहता था, हमारी सलाह के अनुसार रानी साहिब ने चालीस दिन का अनुष्ठान स्वयं किया जिसका फल बहुत ही अच्छा निकला, उनके भतीजे की मानसिक दशा सुधरने लगी और थोड़े ही दिनों में वह पुनः प्रबुद्ध होकर अपना साधारण और स्वाभाविक जीवन व्यतीत करने लगा। टिहरी का एक विद्यार्थी मेट्रिक की परीक्षा में दो बार फेल हो चुका था स्मरण शक्ति उसकी बहुत ही कमजोर थी। उसे एक हजार गायत्री प्रति दिन जपने के लिए विधान बताया गया उसने निष्ठा पूर्वक जप किया और उस वर्ष प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ। अहमदाबाद के एक म्युनिसपल कर्मचारी को अपने विभाग के मुहल्ले के तथा बिरादरी के कई शत्रुओं का एक साथ सामना करना पड़ रहा था, इन शत्रुओं द्वारा उसे कई बार बड़ी २ चोटें पहुँचाई जा चुकी थीं और आगे और हानि करने का षड़यन्त्र चल रहा था, जब उसने गायत्री का आश्रय लिया तो शत्रुओं को मुँह की खानी पड़ी, उन्हें नुकसान पहुंचाने की बजाय खुद नुकसान उठाना पड़ा।

उदयपुर के एक मुकदम जो निस्संतान रहने के कारण सदा बहुत चिन्तित रहते थे, गायत्री के प्रसाद से ४६ वर्ष की आयु में पुत्र प्राप्ति की मनोकामना पूर्ण करने में सफल हुए। तल्काना (सिन्ध) का एक छोटा दुकानदार गायत्री की कृपा से इन चार पाँच वर्षों में ही अच्छी सम्पत्ति का स्वामी बन गया है, व्यापार में उसे काफी लाभ हुआ। गुरुदासपुर (पंजाब) के एक खत्री

महानुभाव आठ महीने से जीर्ण ज्वर से पीड़ित थे डाक्टर और वैद्यों ने उन्हें तपेदिक बताया था, उन्होंने चारपाई पर पड़े पड़े गायत्री का मानसिक जप आरम्भ किया और उस दुस्साध्य बीमारी से छुटकारा पा लिया।

मण्डला (सी. पी.) डिस्टिक्ट बोर्ड के भूतपूर्व चेयरमैन पं० शंभुप्रसादजी मिश्र गायत्री के चमत्कारों पर मुग्ध हैं, उन्हें अनेक बार गायत्री की महिमा के बड़े महत्व पूर्ण अनुभव हुए हैं। उनके अनुभवों को पाठक अगले किसी अङ्क में लेख रूप में पढ़ेंगे। गढ़वाल के महात्मा गोविन्दानन्दजी भयंकर विषधर सर्पों के काटे हुए रोगियों को अच्छा करने में प्रसिद्ध है उन्होंने हमें बताया था कि गायत्री मन्त्र द्वारा ही वे सर्व विष को चिकित्सा करते हैं। बिच्छू का विष भी गायत्री मन्त्र द्वारा उतर जाता है। पागल कुत्ते और सियारों का विष गायत्री द्वारा मंत्रित पानी पिलाकर समस्तीपुर के रईस शोभनशाहु जी उतार देते हैं। आधाशीशी, मस्तिक शूल, कमलवाव और जहरीले फोड़ों को अच्छा करने वाले बाँकुरा के विजयदत्तजी का कथन है कि गायत्री से बढ़कर सर्वशक्ति मान मंत्र और दूसरा कोई नहीं हैं मैं इसी की सहायता से अनेक पीड़ितों को स्वास्थ्य लाभ कराने में समर्थ होता हूं। बालकों की पसली चलना, मूर्च्छा, तन्द्रा, भय, आवेश. स्त्रियों को मृगी आदि में भी गायत्री द्वारा आशातीत लाभ होते देखा गया है। यदि किसी आपत्ति के आने की आशंका हो तो पहले से ही गायत्री की शरण लेनी चाहिए देखा गया है कि ऐसा करने से अधिकांश विपत्तियां टल जाती हैं। इसी प्रकार दुस्साध्य और कठिन कार्यों को पूरा करने के लिये भी गायत्री माता की सहायता बड़ी महत्व पूर्ण सिद्ध होती है। बहुत करके बिगड़े काम बन जाते हैं और पर्वत जैसी कठिनाई राई जैसी सरल हो जाती है।

ऊपर की पंक्तियों में जो कुछ लिखा गया है वह कही सुनी बातें नहीं है वरन प्रत्यक्ष अनुभव है अनेकों बार बिगड़ी को बनाने में गायत्री की अद्भुत शक्ति की परीक्षा कर लेने के पश्चात् ही पाठकों के सामने अपने अनुभवों का कुछ अंश प्रकाशित करने में हम समर्थ होरहे हैं। इस संबंध में एक बात ध्यान रखने की है वह यह कि किराये को पूजा से गायत्री का प्रसन्न होना कठिन है। पंडित पुरोहित को दक्षिणा देकर उससे पूजा पाठ करालेना यह किराये की उपासना है। इससे जो लाभ मिलता है वह स्वयं की हुई साधना की तुलना में बहुत ही तुच्छ है। अपने काम के लिए आप ही साधना करनी चाहिए। अदृष्ट शक्तियां हृदयगत भावों को परखती हैं और उस भाव शृखंला के अनुरूप ही फल देती हैं। अपने कार्य के लिए जितनी तीव्र इच्छा, निष्ठा, एकाग्रता और आराधना स्वयं कीजा-सकती है उतनी किराये के व्यक्ति द्वारा कदापि नहीं हो सकती, इसलिए इतना अच्छा फल भी दूसरों द्वारा की हुई पूजा से हरगिज नहीं मिल सकता। अपने कार्य के लिए आप ही साधना करनी चाहिए, जिनके मनमें तीव्र इच्छा है वे ही सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

ऐसा समझना बड़ी भारी भूल होगी कि मन्त्र तन्त्र मिथ्या है, इनमें कुछ शक्ति नहीं हैं। सर ओलिवर लाज, मेडम ब्लेटेस्की, सर कोनन डायल, डाक्टर ब्रूस, मि० लेडबीटर प्रभृति उच्चकोटि के मनोविज्ञान शास्त्र के पण्डितों ने यह प्रमाणित किया है कि मन्त्रों की उपासना और साधना से जो चमत्कारी फल प्राप्त होते हैं वे मन-शास्त्र की वैज्ञानिक विधि के आधार पर ही होते हैं। निष्ठा, विश्वास, एकाग्रता और तीव्र इच्छा इन चारों का एक स्थान पर केन्द्री करण करने से एक वैसा ही अदृश्य तेज उत्पन्न होता है जैसा कि आतिशी शीशे के द्वारा सूर्य की किरणें एक स्थान पर केन्द्रित कर देने से अग्नि उत्पन्न होजाती है। गायत्री की शब्द रचना-अक्षर शास्त्र के अनुसार बड़ी अद्भुत

है वेद की वह माता है, आदि काल से लेकर अब तक करोड़ों करोड़ उच्च आत्माओं ने इस मन्त्र का असीमित और अनन्य श्रद्धा के साथ जप किया है ऐसे ही अनेक कारणों से एक तो गायत्री मन्त्र स्वयं ही बहुत शक्ति पूर्ण सत्ता बन गया है, दूसरे जब उसे उच्च मनोभावों के साथ सविधि सिद्ध किया जाता है तो एक ऐसी तेजस्वी ब्रह्म शक्ति पैदा होती है जो असफलताओं का निवारण और सफलताओं का वरदान देने में पूर्ण तथा समर्थ होती है। गायत्री द्वारा प्राप्त हुए फल किसी अन्य सत्ता द्वारा दिया हुआ पुरष्कार नहीं है वरन् अपनी निजी शक्ति द्वारा एक प्रकार की आध्यात्म मल्ल विद्या का पुरुषार्थ है। पुरुषार्थी व्यक्तियों को लक्ष्मी मिलती है और साधकों को सिद्धि प्राप्त होती है, वह बिलकुल साधारण और स्वाभाविक बात है, इसमें आश्चर्य और अविश्वास की कोई बात नहीं है।

गायत्री की चालीस दिन की उपासना की एक बहुत लाभदायक विधि अगले अङ्क में लिखेंगे।

दो सूचनाएं—

(१) अखंड ज्योति के चन्दे में वृद्धि।

कागज छपाई की महंगाई कई गुनी होजाने के कारण विवश होकर अखण्ड ज्योति के चन्दे में वृद्धि करनी पड़ रही है। अब आगे से वार्षिक मूल्य २) होगा। जिन ग्राहकों का चन्दा अब तक जमा हो चुका है उनको पुराने चंदे में ही पूरे एक वर्ष तक पत्रिका दीजायगी।

(२) अखंड ज्योति का विशेषाङ्क।

जनवरी सन् ४२ का अंक "सिद्धिअंक" होगा। साधना से किस प्रकार की कैसी और क्योंकर सिद्धि मिलती है इसका वैज्ञानिक विवेचन उसमें रहेगा, कागज कन्ट्रोल के कारण पृष्ट संख्या साधारण अंक से ड्योढ़ी से अधिक न होगी, फिर भी जो कुछ इसमें रहेगा वह "गागर में सागर" को उक्ति चरितार्थ करेगा।

—मैनेजर 'अखंड-ज्योति'

उषःपान और नासिका-पान

(विद्यार्थी रामस्वरूप "अमर" साहित्य-रत्न, तालबेहट)

मेरा निजो अनुभव है क्योंकि मैं लगभग पांच सात साल से उषःपान और दो साल से नासिका के द्वारा जलपान किया करता हूं उषःपान में प्रातः सात खोबा जल और नासिका-पान में तीन खोबा जल पी लेता हूँ। इस थोड़े से ही समय में मुझे पर्याप्त लाभ हुए हैं। जब से मैंने उषःपान प्रारम्भ किया आज तक कभी उदर की व्याधि नहीं हुई, चाहे जब अंटसंट खाने पर भी कब्ज़ की शिकायत नहीं हुई। नासिका पान के दिन से मैंने शिर दर्द और दिमाग़ी बेचैनी को तिलाञ्जलि दे दी है, मेरी आँखों में आज तक कोई रोग नहीं हुआ और जुक़ाम किस चिड़िया का नाम है, यह भी नहीं जान पाया। ऋषियों के बतलाये हुए प्राकृतिक-नियमों के पालन से मेरा ही नहीं बड़े बड़े महापुरुषों का अनुभव है कि स्वास्थ्य बेदामों खरीदा जा सकता है जो स्थायी और सुखकर है। बाजारू दवाइयाँ खाने वाले सज्जनों को इन दोनों या दो में से किसी एक नियम का पालन कर लाभ उठाना चाहिए। प्रारम्भ में कुछ अड़चनें पड़ें तो धैर्य से काम ले अभ्यास करना चाहिए। नासिका से जल खींचने में चार छः दिन अवश्य कष्ट होता है जिससे पानी सीधा मस्तिष्क में चला जाता है किन्तु कुछ समय के बाद जिस प्रकार मुख से पानी पिया जाता है पीने लगते हैं। इससे स्मरण शक्ति तो अवश्य ही ठीक हो जाती है। शिरके सफेद बाल धीरे धीरे काले होने लगते हैं। मुँह की झुर्रियां मिटकर चेहरा चमकने लगता है। वीर्य शुद्ध होकर पुरुषार्थ प्राप्ति होता है।

लिखने से कहीं अतिशयोक्ति का अन्दाज न कर अनुरोध है कि आज से ही स्वच्छ-साफ़ पानी पीना प्रारम्भ कर दीदिये।

संगीत विश्व का प्राण है।

सामूहिक संगीत का महत्व और भी अधिक है। एक साथ मिलकर जब कई व्यक्ति साथ-साथ गाते हैं तो उन सब लोगों का स्वर प्रवाह एवं आन्तरिक उल्लास, मिलकर एक ऐसी तरंग शृंखला उत्पन्न करता है जो उस वातावरण में मिलकर सबको उल्लसित कर देते हैं। जैसे थोड़ी-थोड़ी लकड़ी बहुत लोग इकट्ठी करके होली जमा करते हैं और फिर उसे जलाकर सब लोग एक बड़ी भारी अग्नि ज्वाला जलने का तमाशा देखते हैं और एक बड़े पैमाने पर गर्मी प्राप्त करते हैं। अगर सब लोगों ने प्रथक-प्रथक अपनी थोड़ी-थोड़ी लकड़ियों को जलाया होता तो उससे हर एक को जरा सी आग की लपट मिलती किन्तु सामूहिक प्रयत्न से हर एक को अपने निजी श्रम की अपेक्षा कई गुना लाभ उठाने का अवसर मिलता है। इसी प्रकार सामूहिक संगीत के द्वारा साथ साथ गाने बजाने वालों को अपने प्रयत्न की अपेक्षा कई गुना अधिक लाभ मिल जाता है। जुलूसों में सामूहिक रूप से गीत गाये जाते हैं झण्डाभिवादन, परेट, प्रार्थना, मंगलाचरण आदि अवसरों पर भी सामूहिक गान होते हैं, इसका फल सबको कई गुना प्राप्त होता है।

भगवन्नाम संकीर्तन करने में बड़ा आनन्द आता है। यहाँ तक कि लोग आत्म विभोर होजाते हैं, नृत्य आदि करने लगते हैं। यह सामूहिक स्वर-लहरी का प्रवाह है। आदेशपूर्ण एवं उत्तेजनात्मक ढंग से विशिष्ट भावनाओं के साथ एक छोटी ललित शब्दों वाली पदावली को बार बार दुहराना संकीर्तन कहलाता है इस प्रक्रिया के द्वारा नाड़ी संस्थान में एक लहर उठने लगती है। गाना गाने वालों और सुनने वालों के सिर तान के साथ साथ हिलने लगते हैं. सर्प भी तान से तरंगित होकर फन को लहराने लगता है। संकीर्तन की प्रक्रिया से नाड़ी संस्थान में लहरें उठती हैं और उससे प्रभावित होकर मन भी लहराने लगता है। इस प्रकार की तरंगावली शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है। उससे कई लाभ होते हुए देखे भी गये हैं।

दूसरों का संगीत सुनते रहने की अपेक्षा यह अधिक लाभदायक है कि स्वयं भी गान वाद्य में कुछ लाभ लिया जाय। गाने से फेफड़े और स्वर-यंत्र मजबूत होते हैं ऐसे करने से तपेदिक आदि फेफड़ों की बीमारी होने का डर नहीं रहता। स्त्रियों के लिये भी गायन वाद्य वैसा ही उपयोगी है जैसा कि पुरुषों के लिये। मृगी, बन्ध्यापन, मूर्छा, शिरदर्द प्रभृति बीमारियों से सङ्गीत प्रिय महिलाएँ बची रहती हैं। अर्घ्य दिन, तीज त्यौहार, शादी ब्यौहार के बहाने कुछ न कुछ गाते बजाते रहना स्त्रियों के लिये हिन्दू सभ्यता के अन्तर्गत एक बहुत ही अच्छी प्रथा है।

यों तो गाना रोना सबको आता है पर कला-पूर्ण ढङ्ग से गाना बजाना सीखना दूसरी बात है। इसे ही सङ्गीत कहते हैं। यह सङ्गीत सब किसी के लिये लाभदायक है। कुत्सित, अश्लील और विषय विकार भरे गीतों को सर्वथा त्याग करके सुरुचिपूर्ण ऊँचा उठाने वाले गीतों को गाना और सम्भव हो तो कोई बाजा बजाना सीखने का हर मनुष्य को प्रयत्न करना चाहिये। क्योंकि इससे सरसता एवं स्वस्थता की वृद्धि होती है जोकि मनुष्य जीवन के लिये आवश्यक है।

संगीत का प्रयोग फेफड़े गले, कंठ, तालु, जबड़े, और आमाशय का अच्छा व्यायाम है। रक्त संचार,क्षयी आदि का भय नहीं रहता। रंज, उदासी, चिन्ता आदि के भयानक कुप्रभावों से सहज ही बचाव हो जाता है। इस प्रकार के एक नहीं संगीत से अनेकों लाभ हैं। निस्सन्देह संगीत विश्व का प्राण है। इस प्राण शक्ति को ग्रहण करने का हमें यथाशक्ति प्रयत्न करते रहना चाहिये।

गृहस्थ योग ।

(गताङ्क से आगे)

इस बात को भली प्रकार समझ रखना चाहिए कि योग का अर्थ अपनी तुच्छता, संकीर्णता को महानता, उदारता और विश्वबन्धुत्व में जोड़ देना है। अर्थात् स्वार्थ का परिशोधन करके उसे परमार्थ बना लेना है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए असंख्य प्रकार के योगों की साधनाऐं की जाती हैं उन्हीं में से एक गृहस्थ योग की साधना है। अन्य साधनाओं की अपेक्षा यह अधिक सुलभ और स्वाभाविक है। इसलिए आचार्यों ने गृहस्थ योग का दूसरा नाम सहज योग भी रखा है। महात्मा कबीर ने अपने पदों में सहज योग की बहुत चर्चा और प्रशंसा की है।

किसी वस्तु को समुचित रीति से उपयोग करने पर वह साधारण होते हुए भी बहुत बड़ा लाभ दिखा देती है और कोई वस्तु उत्तम होते हुए भी यदि उसका दुरुपयोग किया जाय तो वह हानिकारक हो जाती है। दूध जैसे उत्तम पौष्टिक पदार्थ को भी यदि अविधि पूर्वक सेवन किया जाय तो वह रोग और मृत्यु का कारण बन सकता है इसके विपरीत यदि जहर को भी उचित रीति से शोधन मारण करके काम में लाया जाय तो वह अमृत के समान रसायन का काम देता है। गृहस्थाश्रम के संबंध में भी यही बात है यदि उचित दृष्टिकोण के साथ आचरण किया जाय गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी ब्रह्म निर्वाण प्राप्त किया जा सकता है जैसा कि अनेक ऋषि महात्मा योगी और तपस्वी पूर्वकाल में प्राप्त कर चुके हैं। आज कल गृहस्थों को दुख चिन्ता, रोग,शोक आधि व्याधि, पाप ताप में ग्रसित अधिक देखा जाता है इससे ऐसा अनुमान न लगाना चाहिए कि इसका कारण गृहस्थाश्रम है, यह तो मानसिक विकारों का, कुविचार और कुसंस्कारों का फल है। दूषित मनोवृत्तियों के कारण हर एक आश्रम में, हर एक वर्ण में, हर एक देश में ऐसे ही संकट दुख उपस्थित होंगे। इसके लिए बेचारे गृहस्थाश्रम को दोष देना बेकार है। यदि वह वास्तव में ही दूषित, त्याज्य या तुच्छ होता तो संसार के महापुरुषों, अवतारों और युग निर्माताओं ने इससे अपने को अलग रखा होता, किन्तु हम देखते हैं विश्व की महानता का करीब करीब समस्त इतिहास गृहस्थाश्रम की धुरी पर केन्द्रीभूत होरहा है।

आत्मीयता की उन्नति के लिए अभ्यास करने का सबसे अच्छा स्थान अपना घर है। नट अपने घर के आंगन में कला खेलना सीखता है। बालक अपने घर में खड़ा होना और चलना फिरना सीखता है योग की साधना भी घर से ही आरम्भ होनी चाहिए। प्रेम, त्याग और सेवा का अभ्यास करने के लिए अपने घर का क्षेत्र सब से अच्छा है। इन तत्वों का प्रकाश जिस स्थान पर पड़ता है वही चमकने लगता है। जब तक आत्मीयता के भावों की कमी रहती है तब तक औरों के प्रति दुर्भाव, घृणा, क्रोध, उपेक्षा के भाव रहते हैं किन्तु जब अपने मन के विचार बढ़ने लगते हैं तो हलके दर्जे की चीजें भी बहुत सुन्दर दिखाई पड़ने लगती हैं। माता अपने बच्चे के प्रति आत्म भाव रखती है इसलिए यदि वह लाभदायक न हो तो भी उसे भरपूर स्नेह करती है, पतिव्रता पत्नियों को अपने काले कलूटे और दुर्गुणी पति भी इन्द्र जैसे सुन्दर और वृहस्पति जैसे गुणवान लगते हैं।

दुनियाँ में सारे झगड़ों की जड़ यह है कि हम देते कम हैं और मांगते ज्यादा हैं। हमें चाहिए कि दें बहुत और बदला बिलकुल न मांगें या बहुत कम पाने की आशा रखें। इस नीति को ग्रहण करते ही हमारे आस पास के सारे झगड़े मिट जाते हैं। आत्मीयता की महान साधना में प्रवृत्त होने वाले को अपना दृष्टि कोण देने का—त्याग और सेवा का बनाना पड़ता है। आप प्रेम की उदार भावनाओं

से अपने अन्तःकरण को परिपूर्ण कर लीजिए और सगे संबंधियों के साथ त्याग एवं सेवा का व्यवहार करना आरम्भ कर दीजिए। कुछ ही क्षणों के उपरान्त एक चमत्कार हुआ दिखाई देने लगेगा। अपना छोटा सा परिवार जो शायद बहुत दिनों से कलह और क्लेशों का घर बना हुआ है—सुख शान्ति का स्वर्ग दीखने लगेगा। अपनी आत्मीयता की प्रेम भावनाऐं परिवार के—आस पास के—लोगों से टकरा कर अपने पास वापिस लौट आती हैं और वे आनन्द की भीनी भीनी सुगन्धित फुहार से छिड़क कर मुरझाये हुए अन्तःकरण को हरा कर देती हैं।

माली अपने ऊपर जिस बगीची की जिम्मेदारी लेता है उसे हर भरा बनाने सर सब्ज रखने का जी-जान से प्रयत्न करता है। यही दृष्टि कोण एक सद ग्रहस्थ का होना चाहिए। उसे अनुभव करना चाहिए कि परमात्मा ने इन थोड़े से पेड़ों को सींचने, खाद देने, सँभालने और रखवाली करने का भार विशेष रूप से मुझे दिया है। यों तो समस्त समाज और समस्त जगत के प्रति हमारे बहुत से कर्तव्य हैं, परन्तु इस छोटी बगीची का भार तो विशेषरूप से अपने ऊपर रखा हुआ है। अपने परिवार के हर एक व्यक्ति को स्वस्थ रखने, शिक्षित बनाने, सद्गुणी सदाचारी और चतुर बनाने की पूरी पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर समझते हुए, इसे ईश्वर की आज्ञा का पालन मानते हुए अपना उत्तरदायित्व पूरा करने का प्रयत्न करना चाहिए। अपने परिवार के सदस्य भी ईश्वर की प्रतिमूर्तियां ही हैं, उनकी सेवा करना भी परमार्थ, पुण्य, लोक सेवा, ईश्वर पूजा से किसी प्रकार कम नहीं है।

स्वार्थ और परमार्थ का मूल बीज अपने मनोभाव, दृष्टि कोण के ऊपर निर्भर है। यदि पत्नी के प्रति अपनी नौकरनी, दासी, सम्पत्ति भोग सामिग्री समझ कर अपना मतलब गाँठने, सेवाऐं लेने, शासन करने का भाव हो तो यह भाव ही स्वार्थ, नरक, कलह, भार, दुख की ओर ले जाने वाला है यदि उसे अपने उपवन का एक सुरम्य सरस वृक्ष समझ कर उसकी सात्विक त्याग मय सेवा का पुनीत उदारता मय प्रेम का भाव हो, अपने स्वार्थ की अपेक्षा उसके स्वार्थ को महत्व देने का भाव हो तो यह भाव ही दाम्पत्ति जीवन को पत्नी सान्निध्य को परमार्थ, स्वर्ग, स्नेह और आनन्द का घर बना सकता है देना कम और लेना ज्यादा। यह नीति-झगड़े की, पाप की, कटुता की, नरक की जड़ है। 'देना ज्यादा और लेना कम से कम" यह नीति-प्रेम, सहयोग, पुण्य, और स्वर्ग की जननी है। बदला चाहने, लेने की, स्वार्थ साधने, सेवा कराने की स्वार्थ दृष्टि से यदि पत्नी, पुत्र, पिता, भाई, भतीजे, माता, भूआ, बहिन, को देखा जाय तो यह सभी बड़े स्वार्थी, खुदगर्ज, बुरे, रूखे, उपेक्षा करने वाले, उद्दंड दिखाई देंगे, उनमें एक से एक बड़ी बुराई दिखाई पड़ेगी और ऐसा लगेगा मानो ग्रहस्थ ही सारे दुखों स्वार्थों और पापों का केन्द्र है। कई व्यक्ति ग्रहस्थी पर ऐसा ही दोष लगाते हुए कुढ़ते रहते हैं, खिन्न रहते हैं एवं घर छोड़ कर भाग खड़े होते हैं। असल में यह दोष परिवार वालों का नहीं वरन् उनके अपने दृष्टिकोण का दोष है, पीला चस्मा पहनने वाले को हर एक वस्तु पीली ही दिखाई पड़ती है।

प्रत्येक मनुष्य अपूर्ण है वह अपूर्णता से पूर्णता की ओर यात्रा कर रहा है। ऐसी दशा में यह आशा नहीं रखनी चाहिए कि हमारे परिवार के सब सदस्य स्वर्ग के देवता, हमारे पूर्ण आज्ञानुवर्ती होंगे। जीव अपने साथ जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों को साथ लाता है, यह संस्कार धीरे धीरे, बड़े प्रयत्न पूर्वक बदले जाते हैं, एक दिन में उन सब का परिवर्तन नहीं हो सकता, इसलिए यह आशा रखना अनुचित है कि परिवार वाले पूर्णतया हमारे आज्ञानुवर्ती ही होंगे। उनकी त्रुटियों को सुधारने में, उन्हें आगे बढ़ाने में, उन्हें सुखी बनाने में सन्तोष प्राप्त करने का अभ्यास डालना चाहिए। अपनी

इच्छाओं की पूर्ति से सुखी होने को आशा करना इस संसार से एक असंभव मांग करना है। दूसरे लोग हमारे लिए यह करें परिवार वाले इस प्रकार का हमसे व्यवहार करें इस बात के ऊपर अपनी प्रसन्नता को केन्द्रित करना एक बड़ी भूल है इस भूल को जो लोग करते हैं उन्हें ग्रहस्थ के आनन्द से प्रायः पूर्णतया वंचित रहना पड़ता है।

स्मरण रखिए ग्रहस्थ का पालन करना एक प्रकार के योग की साधना करना हैं। इसमें परमार्थ, सेवा, प्रेम, सहायता, त्याग, उदारता और बदला पाने की इच्छा से विमुखता यही दृष्टि कोण प्रधान है। जो इस दृष्टि को धारण किये हुए है वह ब्राह्मी स्थिति में है वह घर में रहते हुए भी सन्यासी है।

सात्विक सहायताऐं।

इस मास ज्ञान यज्ञ के लिए निम्न सहायताऐं प्राप्त हुईं। अखंड ज्योति इन महानुभावों के प्रति अपनी आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करती है।

५॥) श्री० गोवर्धन दास जी, पोनी
३॥) श्री० फतेहराज चोरड़िया, भोपालगढ़
३) चौ० विश्वंभरसिंह जी, सुरजनपुर
३) श्री० जी. एम. कोठारी, इन्दोर
२) श्री० बहादुरसिंहजी, छतरपुर
२) पं० रामप्यारे शुक्ल, रीवा
१।) श्री० जगतसिंह जैसिंह, हलद्वानी
१) श्री० ज्ञानसिंह दौलतसिंह मंडलोई, सेन्धवा
१) श्री० देवराम गोविन्दराम, मांडोले, सेन्धवा
१) श्री० विनायकराव भगवन्तराव जोशी, सेन्धवा

सुख शान्ति का मार्ग।

(श्री० सत्यनारायणजी मूधड़ा, हैदराबाद)

संसार में सुख शान्ति का जीवन बिताने के लिए यह आवश्यक है कि हम संसार के नियमों को समझें। राजदंड का भागी वह होता है जो राजा के कानूनों को तोड़ता है। ईश्वर के दंड का—आधव्याधि और बिपत्तियों का—भागी वह होता है जो ईश्वरीय नियमों का उल्लंघन करता है।

ईश्वरीय नियम इतने स्पष्ट हैं कि उन्हें समझने के लिए कोई बहुत बड़ी खोज करने की आवश्यकता नहीं है। हर एक हृदय उन आज्ञाओं को सदैव अनुभव करता रहता है और उसके भीतर से एक पुकार सदैव उठती रहती है यह पुकार ही ईश्वर की आज्ञा है।

दो चीजें मनुष्य चाहता है एक सुख दूसरा सन्तोष या शान्ति। सुख, शारीरिक आनन्द को कहते हैं और शान्ति, आत्मिक आनन्द को। इन दो पदार्थों के अतिरिक्त और तीसरी कोई वस्तु ऐसी नहीं है जिसकी इच्छा किसी प्राणी को होती हो। उन्हीं दो की प्राप्ति के लिए वह नाना प्रकार के कार्यों को किया करता है।

शास्त्र का कथन है कि शक्ति में सुख है। सुखी वही रहेगा जो शक्तिशाली है। शारीरिक दृष्टि से जो बलवान है वह इन्द्रिय जनिक सुखों को भोगेगा बौद्धिक बल सांसारिक, सामाजिक सुखों को बढ़ाने वाला है। त्याग, पवित्रता, उदारता, प्रेम, साहस, उत्साह, दृढ़ता यह सब आत्म बल के चिन्ह है इन बलों के द्वारा हमें आत्मिक प्रसन्नता-शान्ति की प्राप्ति होती है।

ईश्वरीय नियम यह है कि मनुष्य सब दृष्टियों से अपने को बलवान बनावे। जो इस नियम को—आज्ञा को—पालन करेगा, निश्चय ही सुख और शान्ति उसे प्राप्त होगी।

सर्प विष का सुगम इलाज ।

(पं० शिवदत्तजी ओझा)

बरसात के दिनों में ग्रामों में अक्सर सर्प-दंश की दुर्घटनायें हो जाती हैं । ऐसी दशा के समय, जहां कोई इलाज प्राप्त न हो, वहां नीचे लिखी बातें सहायक होंगी :—

काटने के तीन प्रकार - (१) अचानक जोर के साथ सांप के शरीर पर पाँव पड़ जावे जिससे उसकी हड्डी मांस दब कर कुचल जावे और सांप क्रोधित हो कर काट लेवे । उसके दांत अलग-अलग लगे हुए दिखाई दें, दांतों के भले प्रकार गड़ जाने से विष भी रक्त में अच्छी तरह मिल जावे और इन्द्रियाँ बेकार हो जावें । यह विष मारक होता है

(२) त्वचा में लाल-काली-पीली लकीर-सी मालूम हों और थोड़ा-सा रक्त भी निकले-यह अल्पविष होता है ।

(३) कुछ-कुछ दांत भी गड़े हुए मालूम हों, थोड़ा रक्त भी निकला हो परन्तु साँप को जहर छोड़ने का मौका न मिला हो यानी डरा हुआ हो या किसी को काट चुका हो, या रोगी हो इत्यादि-इत्यादि—यह विष मारक नहीं होता ।

तात्कालिक उपाय — मनुष्य जीवन में अभाग्य-वश ऐसे भी मौके आ सकते हैं, इसलिए मनुष्य को चाहिए कि मोटे-मोटे आरंभिक उपायों को याद रखो । नहीं तो कभी-कभी छोटी छोटी भूल से जीवन खतरे में पड़ जाता है । साँप के काटते ही फौरन एक इञ्च ऊपर बहुत मजबूत बन्द लगा देना चाहिये । अनन्तर जल्दी से जल्दी किसी योग्य वैद्य या डाक्टर अथवा सर्प-विष-चिकित्सक के पास पहुंचना चाहिये । परन्तु किसी के कहने से भी बन्द को हरगिज नहीं खोलना चाहिये । अगर कोई सुयोग्य चिकित्सक समीप न हो तो नीचे लिखे हमारे प्रयोगों को काम में लाइए, भगवान कुशल करेंगे:—

विषनाशक प्रयोग—तम्बाकू के पत्ते जल में पीस कर पिलाने से दस्त और कै होकर सर्प-विष-रोगी को आराम हो जाता है ।

२—सत्यानाशी के बीज और काली मिर्च पानी में पीसकर पिलाने से सब जहर दस्त के रास्ते निकल जाता है और रोगी बच जाता है ।

३—इन्द्रायण के बीज एक तोला, मिर्च स्याह ६ नग ५ तोले पानी में पिलाने से सब जहर दस्त के रास्ते निकल जाता है।

४—रीठे को पानी में मल कर हर समय पिलाते रहो जब तक कि वमन होता रहे, सब जहर निकाल देता है । यह दवा त्रिपाक का काम देती है ।

५—आक के दूध में तर करके सुखाई हुई आरने उपले की राख एक तोला, नौसादर ३ माशा, स्याह फिल-फिल (कालीमिर्च) ३ नग, सब को पीस कर हुलास किसी नलकी के द्वारा नाक में फूंकने से रोगी को छींकें आती हैं और मूर्छित रोगी होश में आ जाता है ।

६—जंगलों में राम चना की बेल होती है, इसके पत्तों को मुंह में चबाकर अर्क चूसने से सर्प-विष बिलकुल नष्ट हो जाता है । इसी बेल को खाकर नेवला, सांप के टुकड़े-टुकड़े कर देता है ।

७—जल के साथ विष्णुकांता और तोरई की जड़ को पीस हुलास सुंघाने से सर्प काटा रोगी आरोग्य हो जाता है ।

८—दही, शहद, पीपल, अदरक गोला मिर्च, कूट और सेंधा नमक ये वस्तुयें समान भाग में मिलाकर सेवन करने से तक्षक या बासकी से काटा हुआ मनुष्य यमालय से भी लौट आता है ।

९—कुटकी और तालमूली को जल के साथ कूटकर पिलाने से सर्प-विष नष्ट हो जाता ।

१०—गौ-मूत्र में सोमराजी के बीजों को पीसकर पिलाने से विष दूर हो जाता है। इस औषधि के सेवन से स्थावर, जंगम दोनों विषों का नाश हो जाता है। यह औषधि विष संजीवन है।

अपराजिता बूटी की जड़ घी में मिलाकर सेवन करने से चर्मगत सर्व विष, दूध के साथ सेवन करने से रक्त गत विष, कुड़े के चूर्ण सहित उसका सेवन करने से मांस गत विष, हलदी के साथ सेवन करने से अस्थि गत विष, और चांडाली की जड़ के साथ सेवन करने से शुक्रगत विष, काकली के साथ सेवन करने से मेदांग गत विष, पीपल के चूर्ण के साथ खाने से मज्जा गत विष दूर होता है। अतएव शरीर विष संयुक्त होने पर अपराजिता की जड़ प्रयोग करना मुनासिब है। सर्प-दंशित रोगी के सिर पर जल डालने से भी विशेष आराम होता है। सर्प-दंशित रोगी को सोने नहीं देना चाहिए।

मंद बुद्धि कवियों ने स्त्री को बदनाम करने के लिये उन्हें, मंहगी विपदा, खरीदा हुआ विष और दुख की कालीरात कहा है परन्तु यह कटाक्ष सरासर झूठ है। इस संसार में और चीजें तो परिश्रम से प्राप्त होती है, परन्तु पवित्र स्त्री तो ईश्वर की असीम कृपा से प्राप्त होती है।

× × ×

भारत वर्ष का धर्म यहाँ के पुरुषों से नहीं, पुत्रियों की कृपा से स्थिर है। यदि भारत की देवियाँ अपना धर्म छोड़ देतीं तो अब तक यह देश नष्ट होगया होता।

× × ×

हरेक की प्रकृति में दया, करुणा और कुकर्म से अरुचि के अंकुर हैं, चाहे वह उन्हें सींच कर बढ़ाये चाहे सुखा दे। यह सब गुण केवल अभ्यास से पुष्ट होते हैं।

× × ×

शुद्ध अन्न से शुद्ध बुद्धि।

(ला० रामशरणदासजी, पिलखुवा)

श्री गुरु गोविन्दसिंहजी महाराज के पास खूब अशर्फियाँ थीं, खजाना था फिर भी वह यवनों से युद्ध होते समय अपने लड़ाकू शिष्यों को मुट्ठी भर चने देते थे। एक दिन उन मनुष्यों में से एक मनुष्य ने श्री गुरू गोविन्दसिंहजी की माता जी से जाकर कहा कि माता जी—हमें यवनों से लड़ना पड़ता है और गुरू गोविन्दसिंहजी के पास अशर्फियाँ हैं खजाने हैं फिर भी वह हमें एक मुट्ठी चने ही देते हैं और लड़वाते हैं। माता जी ने श्री गुरुगोविन्दसिंहजी को अपनी गोद में बैठा कर कहा कि—पुत्र यह तेरे शिष्य तेरे पुत्र के समान हैं फिर भी तू इन्हें एक मुट्ठी चने ही देता है ऐसा क्यों करता है?

श्री गुरु गोविन्दसिंहजी ने माता जी को उत्तर दिया—माता क्या तू मुझ अपने पुत्र को कभी विष दे सकती है?

माता जी ने कहा—नहीं।

गुरुगोविन्दसिंहजी ने कहा—माता मेरे यहाँ पर जो अशर्फियाँ हैं खजाने हैं वह इतने पवित्र नहीं हैं उसके खाने से इनमें वह शक्ती नहीं रहेगी। जो मुट्टी भर चने खाने से इनमें शक्ति है वह फिर न रहेगी और फिर यह लड़ भी नहीं सकेंगे।

बीस उँगलियों की कमाई का, धर्म उपार्जित, भरपूर बदला चुका कर ईमानदारी से प्राप्त किया हुआ अन्न ही मनुष्य में सद्बुद्धि उत्पन्न कर सकता है। जो लोग अनीति युक्त अन्न ग्रहण करते हैं उनकी बुद्धि असुरता की ओर ही प्रवृत्त होती है। चित्र कूट में हमने एक महात्मा को खेती करते देखा, एक महात्मा दरजी का काम करते थे। परिश्रम और ईमानदारी के साथ कमाये हुए अन्न से ही शुद्ध बुद्धि हो सकती है और तभी भगवद् भजन, कर्तव्य पालन, लोक सेवा आदि सात्विक कार्य हो सकते हैं।

रोने से काम न चलेगा।

(ले० दर्शन शास्त्री श्री चन्द्रकिशोरजी तिवारी)

दुनियाँ के तमाम नवयुवकों पर दृष्टिपात करने से जान पड़ता है कि किसी देश का नवजवान हमारे देश के युवकों की भांति उदासीन नहीं है। उसके जीवन का कार्य क्षेत्र अपने देश के बाहर भी है। वह निरन्तर उन्नति के मार्ग पर बढ़ने के लिये प्रयत्न करता रहता है और अपनी समस्याओं को सुलझाने का स्वयं जिम्मेदारी समझता है। वह दुनियां के सामने मस्तक उठा कर चलने को अपना जीवन समझता है। परन्तु तुम आज अपनी शक्ति और कर्तव्य को भूलकर बेबसी का रोना ही रो रहे हो।

ईश्वर ने मनुष्य को सम्पूर्ण योग्यतायें और शक्तियां देकर इस संसार में स्वच्छन्दता पूर्वक जीवन बिताने के लिये भेजा है। परमात्मा कभी नहीं चाहता कि उसकी एक सन्तान सिंहासन पर बैठे और उसकी एक संतान दर दर ठोकरें खाये। पिता को अपने सभी बच्चे प्यारे होते हैं। वह सभी को सुखी देखना चाहता है। अगर तुम दुखी हो, तो परमात्मा का अपराध नहीं है वरन् तुम स्वयं अपने हाथों अपने पैर में कुल्हाड़ी मार रहे हो। ईश्वर ने हमें स्वस्थ शरीर और शक्तिशाली मन, स्वतन्त्रता पूर्वक सुखमय जीवन बनाने के लिये दिया है, अपना अधिकार प्राप्त करने और उन्नति करने के लिये दिया है। रोने, कोसने और हाय, हाय करने के लिये नहीं दिया है। ऐसा सर्व सम्पन्न शरीर और मन देने का तात्पर्य ही यही है कि मनुष्य सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करे।

परमात्मा को दी हुई शक्तियों का जो सदुपयोग करते हैं वह सर्व सुख सम्पन्न होते हैं और जो व्यक्ति अपनी शक्तियों को भूलकर उनका दुरुपयोग करते हैं उन्हें जीवन में दुःख भोगना पड़ता है उन्हें जिन्दगी भर रोते ही बीतना है।

तुम अपने समीप के उन अनेक व्यक्तियों को देखो जो सुख और आनन्द में मग्न दिखाई देते हैं। कोई धनवान है कोई बुद्धिमान है, कोई आरोग्य है कोई ज्ञानवान है, एवं किसी को सुख के अनुकूल सभी साधन प्राप्त हैं। क्या, इन व्यक्तियों को उपरोक्त सम्पत्तियां मार्ग में पड़ी मिल जाती हैं? अथवा भीख मांगने से? रास्ते में अन्धों को बटेर जैसी कोई वस्तु भले ही मिल जाय परन्तु भीख में रोटी के टुकड़े से अधिक देने वाला कोई नहीं है।

युवको, क्या, तुम जीवन को सुखी बनाना चाहते हो? क्या तुम अपनी समस्याओं को हल करना चाहते हो? क्या तुम अपने जीवन को प्रभाव शाली और महत्व पूर्ण जीवन बनाना चाहते हो? तो आवो! अपनी आत्मा के अन्दर छिपी हुई महान शक्तियों को पहचानो और उनका सद् उपयोग करने के लिये तत्पर हो जावो। तुम्हारी आत्मा के अन्दर शक्तियों का भण्डार है। तुम्हें अब किसी के सामने अपनी दुखता, दीनता, दुख, शोक तथा पीड़ाओं का रोना न रोना चाहिये। निश्चय करो कि-तुम्हारे अन्दर ज्ञान का दिव्य सूर्य उदय हो चुका है और तुम समस्त विघ्न बाधाओं, बन्धनों और रुकावटों को तोड़ कर आत्मा की प्रबल शक्ति की ओर बढ़ रहे हो, तुम महान हो सरताजों के सरताज हो? तुम निर्भय हो बलवान, अटूट शक्तिशाली हो इसे न भूलो, दुनियां की ऐसी कोई रोने गिड़गिड़ाने की आदत को त्याग दो। अपने अस्तित्व को समझो। दुनियां में कोई ताकत नहीं जो तुम्हें सुख, शान्ति स्वतन्त्रता से वन्चित कर सके। आज से ही अपनी आत्मा की आज्ञा मानना आरम्भ कर दो। अपनी शक्तियों का सदुपयोग करना शुरू कर दो। इसे न भूलो-"जिस प्रकार दुनियां के अधिकांश व्यक्ति स्वच्छन्दता पूर्वक सुखी जीवन व्यतीत करते हैं उसी प्रकार तुम्हें भी परमात्मा के राज्य में स्वच्छन्दता पूर्वक जीवन बिताने का अधिकार है"

पुस्तकालय-महिमा।

(लेखक-श्री लक्ष्मण त्रिपाठी)

एक दिन की बात है, जाड़ों की रात; सनसनाती थी कि जब ठंडी बयार।
बन्द करके द्वार मैं करने लगा, बैठकर आराम-कुर्सी पर विचार॥
क्या अजीव पदार्थ मानव ने रचा, जंगलों को काटकर, लकड़ी को चीर।
पीस कर फिर उसको बुनके अनगिनत, थाने-कागज़ या द्रुपद-दुहिता के चीर॥
फिर उन्हें कोल्हू में पेल मशीनके, देते हैं दिल पर अहो! स्याही की दाब।
छेद कर, फिर काटकर, और छांट कर, हम बनाते हैं, हजारों ये किताब॥
ये किताबें, या कहानी हैं करुणअनगिनत मानव-हृदय की मूक-सी।
ओह! कितनी साध है इनमें छिपी, सोचकर, उठती हृदय में हूक-सी॥
महाजग में, एक जो असहाय-सा, जानवर, कहते जिसे इन्सान हैं।
उसकी सारी बेवकूफी के जमा, इसमें इक से इक अजीब बयान हैं॥
किस तरह, पेड़ों की डाली छोड़कर, गगन-चुम्बी भवन में रहने लगा।
छोड़ कर वह चाल बन मानुस की फिर, कैसे वायु-विमान में उड़ने लगा॥
किस तरह उसने खुदा पहिचान कर, खूँ बहाया फिर खुदा के नाम पर।
और कैसे मर मिटा वह चाव से, बुजुर्गों के स्वर्ग से प्रिय धाम पर॥
मैं दबा-सा जाता हूं, इस ढेर में, जो हिमालय-का सा आलीशान है।
दिल मेरा धक-धक धड़कता, सोचता, पुस्तकालय! क्या अनोखी शान है॥
इसमें गौतम की दया, गांधी का सत, क्षमा ईसा की, मुहम्मद का इमान।
साधना ज़रथुष्ट्र की, कनफ्यूशियस को अमर उपदेश-माला का बितान॥
पुस्तकालय! क्या नहीं तुझमें बता, सब ही तीरथ तुझमें हैं, मेरे लिए।
तुझमें वृन्दावन है मीरा का छिपा, जगमगाते तुझमें 'जौहर' के दिये॥
तुझमें प्याला, विषभरा सुकरातका, तुझमें सूली 'अनलहक' की तान की।
तेरे दामन में कहीं है 'हल्दीघाट' और 'थरमापली' भी यूनान की॥
कितने ही 'परताप' 'लिओनिडाज़' हैं, कितने ही 'अर्जुन' 'औ' 'सीज़र' हैं छिपे।
कौन-सा है दीप जगमग ज्योति से, जो न इस जागृत दिवाली में दिपे॥
है इसी में, आदि कवि की गुरु गिरा, है इसी में प्रतिभा कालीदास की।
हैं इसी में 'सूरके शर', भी इसी में, अमर-वाणी सन्त तुलसीदास की॥
इसमें मिल सकते हमें श्री प्रेमचन्द, मोरकी, ह्यूगो तथा हैं टाल्सटाय।
जिसका चरचा था किया, 'ख़य्याम' ने, है वही यह 'कारवानों की सराय!'
भारतीके भव्य मन्दिर! हे महान! काबे! विद्याप्रेमियों के पाक नाम।
जगत की जागृति के हे जेरूसलम! इसलिए हैं प्रेमसे, तुझको प्रणाम॥

प्रकाशक—पं० श्रीराम शर्मा "अखण्ड-ज्योति" कार्यालय, मथुरा।